मुक्तिबोध की कविताओं में फैंटेसी

विजय अशोक गवळी
(हिंदी विभाग)
राजर्षि शाहू कनिष्ठ महाविद्यालय, चंद्र नगर,
लातूर - ४१३५१२

प्रस्तावना :

'फैंटेसी' में कल्पनाओं और विचारों की परते एक के बाद एक खुलती जाती हैं और कवि की मानसिक उर्वरता का सही बोध पाठकों के समक्ष उपस्थित होता है। 'फैंटेसी' शब्द का निर्माण युनानी शब्द 'फैंटेसिया' से हुआ है, जिसका अर्थ है- "मनुष्य की वह क्षमता जो संभाव्य संसार की सर्जना करती है।" इसी फैंटेसी को लेकर चर्चित कवि **गजानन माधव मुक्तिबोध** है, जिन्होंने मानव जीवन की जटिल संवेदनाओं और उसके अन्तर्द्वन्द्वों की सर्वजनात्मक अभिव्यक्ति के लिए 'फैंटेसियों' का कलात्मक उपयोग किया है। मुक्तिबोध के अुसार - "फैंटेसी अनुभव प्रसूत होते हूऐ भी अनुभव बिंबित होती है।"[१] सरल शब्दों में कहे तो "फैंटेसी मन की निगूढ वृत्तियों का, अनुभूत जीवन समस्याओं का, इच्छित विश्वासों और इच्छित जीवन स्थितियों का प्रक्षेप है।"

प्रगतिवादी विचारधारा के प्रसिध्द कवि गजानन माधव मुक्तिबोध का जन्म १३ नवम्बर, १९१७ को ग्वालियर के श्यौपुर में हुआ। उनकी आरम्भिक शिक्षा उज्जैन में हुई और १९३८ में इन्दौर में होलकर कॉलेज से बी.ए. की उपाधि प्राप्त करके वे उज्जैन के मॉडर्न स्कूल में अध्यापक हो गये। उन्होंने अपने काव्य में सर्वहारा वर्ग की पीड़ा को अभिव्यक्त किया है। उनकी १७ कविताएं अज्ञेय द्वारा संम्पादित 'तार सप्तक' में संकलित है। इसके अतिरिक्त मुक्तिबोध का एक महत्वपूर्ण काव्यसंग्रह 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' में संकलनकर्ता श्रीकांत वर्मा ने क्रमशः भूल-ग़लती, पता नहीं, ब्रह्मराक्षस, दिमाग़ी गुहान्धकार का ओराँगउटाँग!, लकडी का बना रावण, चाँद का मुँह टेढ़ा है, डूबता चाँद कब डूबेगा, एक भूतपूर्व विद्रोही का आत्म-कथन, मुझे पुकारती हुई पुकार, मुझे कदम-कदम पर, मुझे याद आते हैं, मुझे नहीं मालूम, मेरे लोग, मेरे सहचर मित्र, मैं तुम लोगों से दूर हूँ, कल जो हमने चर्चा की थी, एक अन्तर्कथा, एक अरूप शून्य के प्रति, ओ काव्यात्मनू फणिघर, नक्षत्र-खण्ड, चमक की चिनगारियाँ, शून्य, जब प्रश्न-चिह्न बौखला उठे, एक स्वप्न-कथा, अन्तःकरण का आयतन, इस चौड़े ऊँचे टीले पर, चम्बल की घाटी में, अँधेरे में आदि मुक्तिबोध की २८ कविताएँ संकलित की हैं। इनमें से 'ब्रह्मराक्षस', 'अंधेरे में', 'दिमागी गुहान्धकार का ओराँगउटाँग' एवं 'लडकी का बना रावण' आदि कविताएं फैंटेसी को लेकर अधिक चर्चित रही है। यहाँ इन कविताओं के मन्तव्य को तथा उनकी फैंटेसी को स्पष्ट किया जा रहा है।

मुक्तिबोध की कविताओं में फैंटेसी :

ब्रह्मराक्षस :

मुक्तिबोध की इस कविता में 'ब्रह्मराक्षस' को मध्य वर्ग की बौध्दिक चेतना का प्रतिक माना गया है। इसी चेतना के कारण वह मुक्ति के लिए छटपटाता है। जीवन भर जो ज्ञान वह अर्जित करता है उसी से अपनी मुक्ति का पथ खोजता है। यहाँ मुक्तिबोध हमें यह संकेत देते है कि 'व्यक्ति' प्राप्त ज्ञान को व्यावहारिक नहीं बना पाता अर्थात उसे क्रिया में परिणत नहीं कर पाता है, परिणामस्वरूप वह भटकता रहता है और फ्रस्टेशन अर्थात कुण्ठा तथा निराशा का शिकार हो जाता है। कवि बताना चाहते हैं कि संचित अनुभव और ज्ञान तभी सार्थक होता है, जब वह निरन्तर बिकसित एवं प्रवर्द्धित होता रहे और भावी ज्ञान की आधारशिला बन सके। यदि ऐसा नहीं होगा तो अतीत का ज्ञानात्मक संवेदन अनुभव व्यर्थ प्रमाणित हो जाएगा।

वह मूलबध्द संस्कारों के कारण विकसित 'पाप छाया' से 'आत्मशुद्धि' के लिए निरंतर बावड़ी में स्नान करता हुआ अपनी देह घिसता रहता है किन्तु उसका मैल कम नही होता बल्कि बढ़ता ही जाता है, यथा :-

"बावड़ी में उन घनी गहराइयों में शून्य
ब्रह्मराक्षस एक पैठा है,
वह भीतर से उमड़ती गूँज की भी गूँज,
बड़बड़ाहट-शब्द पागल-से।
गहन अनुमानिता

तन की मलिनता
दूर करने के लिए प्रतिपल
पाप - छाया दूर करने के लिए, दिन रात
स्वच्छ करने -
ब्रह्मराक्षस
घिस रहा है देह
हाथ के पंजे, बराबर,
बाँह-छाती -मुँह छपाछप
खूब करते साफ़,
फिर भी मैल
फिर भी मैल!!"[२] (चाँद का मुँह टेढ़ा है - पृष्ठ क्र. ११-१२)

जैसी विडम्बना कवि की इन काव्य पक्तियों में है ठीक वैसी ही विडम्बना बुद्धिजीवी की भी है। यह बुद्धिजीवी प्रत्येक विचारक के मत की अपने मनोनुकूल व्याख्या करता हुआ उसी में उलझता रहता है। उसका अपूर्ण ज्ञान ही उसे दम्भी बना देता है और इसीलिए तिरछी पड़ी रवि रश्मि को देखकर उसे लगता है कि सूर्य भी उसे झुककर प्रणाम कर रहा है। यथा:

"किन्तु, गहरी बावड़ी
की भीतरी दीवार पर
तिरछी गिरी रवि-रश्मि,
के उड़ते हुए रमाणु, जब
तल तक पहुँचते हैं कभी
तब ब्रह्मराक्षस समझता है, सूर्य ने
झुक कर 'नमस्ते' कर दिया।"[३] (चाँद का मुँह टेढा है -पृष्ठ क्र. १२)

वास्तव में ब्रह्मराक्षस की ट्रेजिडी आज के बुद्धिजीवी की ट्रेजिडी है क्योंकि वह ज्ञानोपार्जन करके भी मनोवांछित परिवर्तन नहीं कर पाता। इस प्रक्रिया में वह जो प्रयत्न करता है, वे सभी असफल हो जाते हैं। परिणामस्वरूप वह निराशा और कुण्ठा से ग्रस्त हो जाता है।

कवि मुक्तिबोध की धारणा थी कि अतीत से पूरी तरह टूटकर कोई भी वर्तमान सार्थक भविष्य का रूप नहीं ले सकता। प्रस्तुत कविता में वे इसी विचारधारा को प्रतीकों के माध्यम से व्यक्त करना चाहते हैं। ब्रह्मराक्षस अतीत की बौद्धिक चेतना जो बावड़ी रूपी वर्तमान समूह में रहता है और अपनी आत्मा के अन्वेषण में रत है। यथा:-

"मैं ब्रह्मराक्षस का सजल-उर शिष्य
होना चाहता
जिससे कि उसका वह अधूरा कार्य,
उसकी वेदना का स्त्रोत
संगत, पूर्ण निष्कर्षों तलक
पहूँचा सकूँ।"[४] (चाँद का मुहँ टेढा है -पृष्ठ क्र. १७)

श्रीकांत वर्मा द्वारा संकलित मक्तिबोध का काव्य संग्रह 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' में संकलित अंधेरे में यह एक ४५ पृष्ठों की लम्बी कविता है। इस कविता का प्रारंभ ही कवि मुक्तिबोध ने 'फैंटेसीपरक' वातावरण से किया है। यथा:-

"अरे ! अरे !!
तलाव के आस-पास, अँधेरे में वन वृक्ष
चमक-चमक उठते हैं हरे-हरे अचानक
वृक्षों के शीश पर नाच-नाच उठती हैं बिजलियाँ
शाखाएँ डालियाँ झूम कर झपट कर
चीख, एक दूसरे पर पटकती हैं सिर कि अकस्मात्-
वृक्षों के अँधेरे में छिपी हुई किसी एक
तिलस्मी खोह का शिला-द्वार
खुलता है धड़ से

घुसती है लाल-लाल मशाल अजीब-सी,
अन्तराल-विवर के तम में
लाल-लाल कुहरा,
कुहरे में, सामने, रक्तालोक-स्नात पुरूष एक,
रहस्य साक्षात।"[५] (चाँद का मुँह टेढ़ा है -पृष्ठ क्र. २६२-२६३)

प्रस्तुत कविता में व्यक्त जो दो रक्तालोक स्नात पुरूष हैं, इनमें से एक अँधेरे कमरों में चक्कर लगा रहा है और दूसरा बाहर तालाब की लहरों में अपना चेहरा देखता हुआ भीतर आने के लिए सांकल बजा रहा है। वास्तव में ये दोनों रक्तालोक स्नात पुरूष क्रमशः 'सामाजिकता' एवं 'कविता' के प्रतीक है। कवि मुक्तिबोध इन प्रतीकों के माध्यम से यह कहना चाहते हैं कि मनुष्य की पूर्ण संभावनाएँ तभी प्रकट होगी, जब कविता सामाजिकता को ग्रहण कर ले। दुसरे शब्दों में कहे तो दोनों का अन्योन्याश्रित संबन्ध है।

इस कविता में कवि मुक्तिबोध ने जिस 'अँधेरे' का उल्लेख किया है, वह अँधेरा यह संकेतित करता है कि आज सामाजिकता अव्यवस्था से घिर गई है तथा कवि के मानस में भी अँधेरा भर गया है और उसका व्यक्तित्त्व भी अंधकार ग्रस्त है। उसे आत्मान्वेषण करते हुए उपलब्ध जीवन सत्यों से आत्मविस्तार करना होगा। जब जीवन सत्यों का आत्मविस्तार होगा तभी अंधेरा दूर होगा। जब वह 'मैं' से 'हम' की ओर जाएगा, अपनी अस्मिता एवं इयत्ता को समाज समर्पित करेगा तभी आत्मशुद्धि होगी और आत्मशुद्धि होने पर ही प्रकाश होगा। यहाँ कवि ने आत्मपरिष्कार एवं आत्म विस्तार द्योतिक करनेवाली फैंटेसी का प्रयोग किया हैं क्योंकि यहा रक्तालोक स्नात पुरूष को मानव 'संस्कृति पुरूष' अर्थात 'कवि' का प्रतीक माना जा सकता है, जो मध्यमवर्ग की आदर्शवादिता को दृढ़ता से धारण किए हूए है, जिसकी प्रवृत्ति समझौतावादी नाही हैं।

'दिमागी गुहान्धकार का ओराँगउटाँग' इस कविता में कवि मुक्तिबोध स्वयं फैंटेसी पर एक और विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि वह स्वप्न, के भीतर एक स्वप्न विचार धारा के भीतर और एक प्रच्छन्न विचारधारा, कथ्य के भीतर एक और कथ्य, मस्तिष्क के भीतर एक और मस्तिष्क, कक्ष के भीतर एक और गुप्त कक्ष होता है। यहाँ 'ओराँगउटाँग' से कवि का अभिप्राय मन की भीतरी परतों में दबे अवचेतन से रहा है कविता की शुरूआत ही वे मन की भीतरी परतों में दबे अवचेतन से करते हैं। यथाः-

"स्वप्न के भीतर एक स्वप्न,
विचारधारा के भीतर और एक अन्य
सघन विचारधारा प्रच्छन्न!!
कथ्य के भीतर एक अनुरोधी
विरूध्द विपरीत
नेपथ्य------- संगीत !!
मस्तिष्क के भीतर एक मस्तिष्क
उसके भी अन्दर एक और कक्ष
कक्ष के भीतर
एक गुप्त प्रकोष्ठ और
कोठे के साँवले गुहान्धकार में
मज़बूत---- संदूक़
दृढ, भारी, भरकम
और उस सन्दूक़ भीतर कोई बन्द है यक्ष
या कि ओराँगउटाँग हाय
अरे ! डर यह है--------
न ओराँग------ उटाँग कहीं छूट जाय,
कहीं प्रत्यक्ष न यक्ष हो।"[६] (चाँद का मुँह टेढ़ा है-पृष्ठ क्र. १८)

'लकड़ी के बने रावण' कविता में 'लकड़ी के बना रावण' उस काव्य नायक का प्रतीक है जो अपने ही परिवेश से कट गया है। वह शिखर पर अकेला खडा है और अपने मोह से घिरा हुआ है। अगर इसे मार्क्सवादी दृष्टि से देखें तो कविता में वर्णित यह रावण पूंजीवादी वर्ग का प्रतीक लगता है, जो बस अभी हाल ही में नष्ट होने ही वाला है। यथाः

"हाय, हाय
उग्रतर हो रहा चेहरों का समुदाय

और कि भाग नहीं पाता मैं
हिल नहीं पाता हूँ
मैं मन्त्र-कीलित -सा, भूमि में गड़ा-सा,
जड़ खड़ा हूँ
अब गिरा, तब गिरा
इसी पल कि उस पल------।"[७] **(चाँद का मुह टेढा है-पृष्ठ क्र. २७)**

अंतत: समग्र सारांश के रूप में यह कहा जा सकता है कि कवि गजानन माधव मुक्तिबोध ने अपनी उपरोक्त कविताओं में फैंटेसी का सफल प्रयोग किया है। कवि की ये 'फैंटेसियां' उनके अन्तर्द्वन्व्दग्रस्त मन से उद्‌भूत है, किन्तु इनका भावात्मक उद्देश्य तथा संवदेनात्मक दिशा भी है। 'फैंटेसी' एक भले ही मानसिक प्रक्रिया हो, किन्तु सामाजिक यथार्थ से जुड़कर उसने अपनी उपयोगिता सिध्द कर दी है।

संदर्भ ग्रंथ :

१. आलोचक मुक्तिबोध : चारूमित्र, प्रथम संस्करण - १९७८, पृष्ठ २०.
२. चाँद का मुँह टेढ़ा है : मुक्तिबोध, संकलनकर्ता : श्रीकांत वर्मा, द्वितीय संस्करण -१९६५, पृष्ठ ११-१२.
३. वही, पृष्ठ १२.
४. वही, पृष्ठ १७.
५. वही, पृष्ठ २६२ २६३.
६. वही, पृष्ठ १८.
७. वही, पृष्ठ - २७.

Aayushi International Interdisciplinary Research Journal
ISSN 2349-638X
www aiirjournal.com